

28 शिक्षण का नवाचारी तरीका

मैत्रेयी

आज की दुनिया में ऐसी कई सारी चीजें हैं जिन्हें हम अनेक तरीकों से सीख सकते हैं। मुझे लगता है कि व्यक्तियों के रूप में यह हमारे लिए, बेहद महत्वपूर्ण है कि हम जो भी पढ़ रहे हों उसे सीखने–समझने का सही मार्ग तलाशें। चाहे वह किसी गणित के सवाल को हल करने का तरीका हो या यह समझना कि टेलीफोन कैसे काम करता है, या यह कि पत्तियाँ हरी क्यों होती हैं। मुझे लगता है कि सभी की सीखने–समझने की एक अलग शैली होती है। एक बार जब हम समझ लें कि हमारे मजबूत पक्ष क्या हैं, तो हम उस समझ को अपने भले के लिए इस्तेमाल करते हुए उसे अच्छे से सीख सकते हैं। मैंने पाया है कि जब मेरे सामने सीखने को कई चीजें होती हैं, तो उन सभी को सीखने का मेरा तरीका भी अलग–अलग होता है। पर कभी–कभी मेरे लिए यह समझ पाना एक चुनौती रही है कि अमुक चीज को सीखने के लिए कौन–सा तरीका सर्वोत्तम होगा।

सीखने की प्रक्रिया में निश्चित रूप से उपयोग में लाई जाने वाली शिक्षण पद्धति या शैली का बहुत बड़ा हाथ होता है। सेण्टर फॉर लर्निंग (सी.एफ.एल.) जैसे स्कूल में जहाँ मैंने सात साल तक जीवन बिताया, मुझे अपनी गति से सीखने का समय दिया गया और छूट दी गई। ऐसी कक्षाओं में होने के कारण, जहाँ विद्यार्थियों की संख्या महज तीन से लेकर अधिकतम आठ तक होती थी, चर्चाओं और सवालों को एक–एक करके लिया जा सकता था ताकि सबके सन्देहों को दूर किया जा सके। स्कूल की ऐसी संरचनाओं के कारण विद्यार्थियों और शिक्षक के बीच के रिश्ते की विशेषताएँ थीं : चर्चाएँ, प्रश्न और शिक्षा। मैंने इस संरचना का अपने अकादमिक और गैर–अकादमिक, दोनों तरह के कार्यों में भरपूर लाभ लिया।

स्कूल में ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के दौरान हमने कुछ ऐसे प्रोजैक्ट किए जिनमें मुझे लगा कि, विद्यार्थी और शिक्षक, दोनों की भूमिकाओं की दृष्टि से सीखने और सिखाने की अलग पद्धति का इस्तेमाल किया गया था। हमने दो प्रोजैक्ट किए थे, एक जमीन से सम्बन्धित था और दूसरा मानवाधिकारों से। दोनों ही अनोखे थे और उसका कारण इन अध्ययन–क्षेत्रों को समझने के लिए हमारे द्वारा अपनाई गई पद्धति थी।

मानवाधिकार प्रोजैक्ट हमारे सामान्य अध्ययन प्रोजैक्ट का हिस्सा था। 'सामान्य अध्ययन' बारहवीं कक्षा में पाठ्यक्रम का हिस्सा था, जिसमें हर साल एक नया अध्ययन–प्रसंग लिया जाता है। ये अध्ययन–प्रसंग कोई भी ऐसे सामाजिक या पर्यावरण आदि से सम्बन्धित मुद्दे हो सकते थे जिनसे जुड़कर हम गहराई से उनका अध्ययन कर सकते हों।

मानवाधिकार प्रोजैक्ट के माध्यम से हमने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा और बाल अधिकार घोषणा का अध्ययन करने का लक्ष्य रखा। प्रोजैक्ट की योजना इस तरह से बनाई गई थी कि हमारे पास एक सैद्धान्तिक भाग भी था और एक प्रायोगिक भाग भी, ताकि हम जो पढ़ रहे हों उसे वास्तव में भौतिक रूप से महसूस भी सकें। पहले तो, मानवाधिकार घोषणा को देखने के पूर्व ही, शिक्षकों ने हमें चर्चा करने के लिए, जिसमें वे खुद भी शामिल हुए, प्रेरित किया जहाँ हमने इस बात पर विचार–विमर्श किया कि मनुष्यों के रूप में हम अपने लिए किन–किन बातों को जरूरी मानते थे, और अपने को किन–किन चीजों का अधिकारी मानते थे। हमसे इस बात की कल्पना करने को कहा गया कि अगर हमें कोई समाज/समुदाय निर्मित करना हो तो "तुम्हारे लोगों के पास किस तरह के अधिकार होंगे? वे क्या–क्या पाने के अधिकारी होंगे?" ये वे प्रश्न थे जिनके उत्तर देने की हमने कोशिश की। इसके बाद, हमने घोषणाओं को सविस्तार पढ़ा। अनुच्छेद दर अनुच्छेद पढ़ा



कक्षा का एक दृश्य – विचारों का आदान–प्रदान

और पाया कि जिन बातों को हमने किसी समाज के लिए जरूरी पाया था वे उस उद्घोषणा में भी थीं।

यदि हम पढ़ने–सीखने की इस पद्धति को देखें तो मुझे ऐसा लगता है कि यह हमें चीजों के बारे में ज्यादा गहराई से सोचने में मदद करती है। जब हमने उन चीजों के बारे में सोचना शुरू किया जिन्हें हम जरूरी समझते थे, तो एक बात से दूसरी बात निकलती गई। जैसे इस बात से लेकर कि पानी निशुल्क उपलब्ध होना चाहिए या नहीं, इस बात तक कि स्कूलों/कॉलेजों आदि में आरक्षण होना चाहिए या नहीं, हमने गम्भीर बहसें कीं। चर्चा के दौरान हम जुड़े हुए बहुत से अलग–अलग बिन्दुओं पर जाते रहे और हमें लगा कि इस बात पर एक आम सहमति बनाना बहुत कठिन है कि हमारे 'नए' समाज में हर व्यक्ति किन चीजों का अधिकारी होगा। चर्चा, सहमति और असहमति की इस प्रक्रिया ने ऐसी गुंजाइश उपलब्ध करवाई जहाँ कोई 'सही' या 'गलत' उत्तर नहीं था। मुझे लगता है कि ऐसा खुला अवसर मिलने पर चर्चा की इस पूरी प्रक्रिया से आपको इन चीजों के बारे में सोचने में मदद भी मिलती है और आप अपने विचारों को स्पष्ट ढंग से कह पाते हैं।

इस प्रोजैक्ट का एक हिस्सा था लोगों से जाकर बात करना और उनसे कुछ सवाल पूछना। जैसे क्या वे उन्हें मिले हुए अधिकारों से अवगत हैं और वे जिन चीजों को पाने के अधिकारी हैं क्या वे उन्हें मिल रही हैं आदि।

इस पद्धति में, हम जो भी प्रसंग पढ़ रहे होते थे, उसे समझाने के लिए और उत्तरों की खोज के लिए हमारे शिक्षक हमें 'वास्तव में' सम्बन्धित जगह पर भेजते थे। हमें खुद जाकर देखना पड़ता था कि क्या लोग जिन अधिकारों के हकदार हैं वे वास्तव में उन्हें मिल रहे थे या नहीं। इस प्रक्रिया के दो भाग थे। पहली में लोगों से मिलना और स्थानों के दौरों पर जाना। हम बंगलौर की एक–दो झुग्गी बस्तियों में गए और वहाँ रह रहे लोगों से बात करके यह जानने का प्रयास किया कि नागरिक होने के नाते वे जिन अधिकारों के हकदार थे उन्हें नजर में रखते हुए उन लोगों की स्थिति कैसी थी और उन्हें किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था आदि। मुझे लगा कि मैंने सबसे ज्यादा समझ इसी प्रोजैक्ट से हासिल की। दूसरे भाग में हमें किसी एक ऐसे व्यक्ति से बात करना थी जिससे हम रोज मिलते थे। उससे वे सवाल पूछना थे जो हमें कक्षा में सूझते थे। हम सभी ने या तो घरों में काम करने के लिए आने वाले लोगों से बात की या सब्जी बेचने वालों से, या दूसरे अपार्टमेंट्स के चौकीदारों से बात की। इस अभ्यास के माध्यम से हमने जाना कि लोगों को वे अधिकार, जिन्हें हम सबसे बुनियादी अधिकार समझते हैं, जैसे स्वच्छता, आश्रय, शिक्षा आदि अभी भी व्यावहारिक रूप से नहीं मिल रहे हैं। इस बात से, कि उन लोगों ने खुद हमें यह सब सुनाया और अपने घर दिखाए, हमें उनकी वास्तविक स्थिति का पूरा एहसास हुआ। यदि मैंने इसे किसी पाठ्य–पुस्तक में पढ़ा होता, तो मुझे यकीन है कि मेरे ऊपर इसका इतना असर नहीं होता।

मुझे लगता है कि वास्तव में कुछ सीखने के इस अनुभव ने मुझ पर और निश्चित ही मेरे साथियों पर बहुत गहरा प्रभाव छोड़ा। मुझे लगता है कि किसी चीज को अनुभव



अन्वेषण और खोज

के माध्यम से सीखना, किताब में पढ़ लेने से बहुत अलग होता है क्योंकि हम यथार्थ में उन चीजों का अनुभव करते हैं। हम अपने आसपास होने वाली चीजों को देखते हैं, सुनते हैं और समझते हैं, और जब आपको कोई चीज इस ढंग से सिखाई जाती है या आप स्वयं सीखते हैं, तो उसकी बात ही अलग होती है।

एक अन्य ऐसा प्रोजेक्ट, जिसमें हम जो पढ़ रहे थे उसे हमने अनुभव किया, वह भूमि प्रोजैक्ट था जिसे हमने स्कूल में किया। यहाँ सीखने की प्रक्रिया का काफी बड़ा हिस्सा सामान्य अवलोकन, मालूमातों को दर्ज करने और सबके साथ बाँटने का था। एक बार फिर, हमारे शिक्षकों ने हमें प्रोत्साहित किया कि जिस भूमि पर हम रह रहे थे उसके बारे में जानने, उसे समझने के लिए इन्हीं तरीकों का प्रयोग करें।

सी.एफ.एल. परिसर बंगलौर के बाहरी इलाके में बड़ी–सी खूबसरत भूमि पर स्थित है। स्कूल की इमारतें परिसर के एक भाग में केन्द्रित हैं और बाकी जगह को कम से कम देख–रेख के साथ प्राकृतिक रूप से बढ़ने के लिए छोड़ दिया गया है। इसलिए वहाँ काफी संख्या में पेड़–पौधे और पशु–पक्षी पाए जाते हैं। स्कूल के पाठ्यक्रम के अंश के रूप में भूमि के साथ जुड़कर उसपर काम करना एक अहम भाग है– चाहे उसका मतलब बागवानी हो, खरपतवार की सफाई हो, पक्षियों को निहारना हो या बस उस पगडण्डी पर चहलकदमी करना जो विद्यार्थियों ने बनाई है।

अपने आसपास की किसी चीज के बारे में जानने–सीखने के लिए अवलोकन को एक महत्वपूर्ण ढंग के रूप में इस्तेमाल करने के लिए हम इस प्रोजैक्ट में शामिल हुए। हमने उस भूमि के बारे में जिसमें हम रहते हैं, उन पौधों के बारे में जो वहाँ उगते हैं, विभिन्न ऋतुओं के पक्षियों इत्यादि के बारे में समझ हासिल की। यह पद्धति अत्यन्त दिलचस्प थी क्योंकि हम विद्यार्थियों को परिसर के अलग–अलग भागों में अवलोकन के लिए न्यूनतम दिशानिर्देशों के साथ अकेला छोड़ दिया गया था।

हमसे शुरू में इतना ही कहा गया “सिर्फ देखो, और जो कुछ भी देखो, सूंघो, सुनो और महसूस करो, उसे लिखते जाओ।” वहाँ, कुछ देर के लिए, हमें जो कुछ भी दिखा उसे समझने–जानने के लिए हम खुद ही जिम्मेदार थे। कुछ घण्टों तक उन स्थानों पर घूमने के बाद, हम लोग वापस आते और हमने जो अवलोकन किए होते उन्हें किताबों में या इण्टरनेट पर तलाश करते। इसके साथ ही, हम अपने शिक्षकों और मित्रों के साथ अपने अवलोकनों को बाँटते। इस तरह, सबको इससे लाभ होता और यह एक ऐसी प्रक्रिया बन गई जिसमें प्रत्येक व्यक्ति कुछ नया सीख रहा था – शिक्षक भी और विद्यार्थी भी!

मुझे लगता है कि यह पद्धति जिसमें जो भी तलाश करना होती है वह स्वयं बच्चों को करने दी जाती है, बड़ी ही रोचक है। इस वजह से कि इस पद्धति में लोग खुद अवलोकन करते हैं और जो कुछ भी वे देखते हैं उसे साझा करते हैं, मुझे लगता है कि हमने केवल कक्षा में बैठकर किताब में से वहाँ पाए जाने वाले पेड़–पौधों और पशु–पक्षियों के बारे में पढ़ने की तुलना में इस तरह से कहीं ज्यादा सीखा।

ये ऐसे दो सशक्त उदाहरण हैं कि किस तरह विद्यार्थी किसी विषय–प्रसंग को गैर–पारम्परिक ढंग से सीख सकते हैं। शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों को पहले से तय और नियोजित पाठ्य–सामग्री के साथ व्याख्यान देने के पारम्परिक तरीके को ऐसी पद्धति में बदला जा सकता है जहाँ विद्यार्थी और शिक्षक, दोनों ही प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भागीदार हों। मैंने इस पद्धति को व्यक्तिगत रूप से बहुत लाभकारी पाया। शिक्षा के क्षेत्र में काम करने में रुचि होने के नाते मैं यह मानती हूँ कि सही परिवेश और वातावरण के साथ शिक्षक और विद्यार्थी, दोनों सीखने वाले हो जाते हैं, और फिर यह यात्रा बहुत रोचक हो सकती है।

मैत्रेयी *माउण्ट कारमैल कालेज, बंगलौर में जनसंचार का स्नातकीय अध्ययन कर रही हैं। उनसे maitreyi.10@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: भरत त्रिपाठी*